सिक्ख-सरदार

पांडेय बेचन शर्मा

सिक्ख-सरदार

उस रात्रि में, फीरोजशाह में, एक ओर से अंगरेजी और दूसरी ओर से सिक्खों की तोपें भैरवी-रागिनी अलाप रही थीं। परंतु उनके गीतों में न तो कहीं -

'कलिंदनंदिनीतटे न नंदनंदनंदनम'

की ध्वनि थी और न कहीं -

'अधरं मधुरं हृदयं मधुरं

मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।'

की मधुरता ही। वे तो एकदम नीरस कंठ से - 'अड़ड़ड़ड धम्म! अड़ड़ड़ड धम्म!' गरज रही थीं। उनकी इस भैरवी से एक भी हृदय प्रसन्न न होता था। चारो ओर से 'हाय-हाय!' 'बचाओ-बचाओ!' शब्दों की बौछार-सी हो रही थी।

ऐसे ही भीषण समय में अंगरेजी सेना के एक भाग में तत्कालीन गवर्नर जनरल सर हेनरी हार्डिंज अपने पुत्र से कुछ बातें कर रहे थे। सर हार्डिंज ने अपने पुत्र से पूछा -'लड़ाई का रूप कैसा है?'

'बहुत ही भीषण। हमारी हार निश्चित है। पिताजी, मुझे स्वप्न में भी विश्वास न था कि सिक्ख-सेना ऐसी वीरता दिखलाएगी!'

लॉर्ड हार्डिंज अपने पुत्र का वक्तव्य सुनकर चुप रह गए। वह आगे बोला - 'उनकी तोपें भीषण वेग से गोले उगल रही हैं। हमारी न-जाने कितनी रसद की गाड़ियों को उन्होंने तहस-नहस कर दिया है। बारूद के ढेर में आँच लगने से न-जाने कितने अंगरेज वीर काल के गाल में पहुँच गए हैं! ओह! सिक्ख तो बड़े ही भयंकर निकले!'

इस बार लॉर्ड हार्डिंज बोले - 'सचमुच सिक्ख वीर जाति है! उस दिन की घटना तुम्हें याद है?'

'किस दिन की पिताजी?'

'जिस दिन मैंने लेफ्टिनेंट विडल्फ को सिक्खों के विरुद्ध हथियार न उठाने की आज्ञा दी थी।'

'सिक्खों के विरुद्ध शस्त्र न ग्रहण करने की आज्ञा? न, मैं तो उस घटना को नहीं जानता।'

'ओह! विचित्र घटना है। सिक्ख-जाति की वीरता का एक ज्वलंत उदाहरण। लेफ्टिनेंट विडल्फ किसी प्रकार बंदी होकर सिक्ख-सिपाहियों के हाथ पड़ गए थे। पर जिस समय हथकड़ी-बेड़ी से जकड़कर सिपाही विडल्फ को अपने सरदार के पास ले गए, जानते हो, उस समय सरदार ने क्या कहा? उसने लेफ्टिनेंट की हथकड़ी-बेड़ी कटवा दीं। कहा - 'हम लोग बंदियों से बदला नहीं लेते। हमारा बदला सशस्त्र शत्रुओं के साथ संग्राम-स्थली में ही होता है। जाओ वीर! तुम मुक्त हो!'

सिक्ख-सरदार की इस उदारता के स्मरण-मात्र से लॉर्ड हार्डिंज गदगद हो गए। वह आगे बोले - 'कृतज्ञता के बोझ से विडल्फ इतना दब गया कि यदि मैं उसे सिक्खों से लड़ने का निषेध न करता, तो वह स्वयं वही करता...।'

गर्वनर जनरल साहब अभी कुछ कहने ही वाले थे कि एक अंगरेज झपटा हुआ उनके पास आया। चेहरे से घबराहट बरस रही थी। आते ही बोला - 'माई लॉर्ड, सेनापति लिटलर को अपनी सेना का ब्यूह बिगाड़कर भागना पड़ा! और, सेनापति बलिस की दो पलटनें, यदि सेनापति गिलबर्ट के व्यूह के दाहने भाग में शरण न लेतीं, तो पूर्णतया नष्ट हो जातीं। जान पड़ता है, आज हमारी हार निश्चित है।'

लार्ड हार्डिंज ने उस अंगरेज को धैर्य दिलाते हुए कहा - 'हमारी हार असंभव है। अंगरेज आज तक कभी किसी देशी सेना से हारे हैं? जाओ, अपना काम देखो।'

अंगरेज चला गया। लॉर्ड साहब अपने पुत्र से बोले - 'यह लो, यह मेरा तमगा है, और यह घड़ी, और कुछ अत्यावश्यक कागज। आज या तो विजय होगी या तुम्हारे पिता की - मेरी - मृत्यु! हम सात समुद्र पार कर यहाँ पराजित होने के लिए नहीं आए हैं!'

हार्डिंज पागलों की तरह एक तरफ झपट गए।

'युद्ध-स्थल से पत्र आया है क्या? जरा खोलकर देख तो।' अटारी के सरदार श्यामसिंह की पत्नी चंदादेवी ने अपनी दासी से कहा।

दासी - 'खोलकर देखना क्या? युद्ध-स्थल से तो आया ही है। अभी-अभी एक सवार लेकर आया है।'

चंदा - 'अच्छा, पढ़कर सुना।'

दासी पत्र पढ़ने लगी -

'प्रियतमे!

'मुदकी के युद्ध की घटनाओं को मैंने एक पत्र द्वारा तुम्हें जता दिया था। अब इस पत्र में फीरोजशाह के युद्ध की कथा लिखता हूँ -

'इसमें कोई संदेह नहीं कि सिक्खों की स्वाधीनता महाराणा रणजीतसिंह के साथ ही स्वर्ग चली गई। इस वक्त हमारे सरदारों में फूट का साम्राज्य है। 21 दिसंबर, 1845 ई. को जो युद्ध हुआ, उसका वर्णन करते हुए कलेजा फटा जाता है।

'21 तारीख की रात को अंगरेज भी समझ गए कि सिक्खों का रक्त कैसा होता है! यदि उस दिन भी हमारे सेनापतियों ने हमें धोखा न दिया होता, तो हमारी विजय तो होती ही, साथ ही एक भी एक विदेशी जीवित न बचता। पर हुआ क्या? सेनापति तो अंगरेजों से मिले थे, उन्हें तो स्वदेश-विक्रय की धुन थी। वे बराबर वैसा ही कर्म करते रहे, जिससे सिक्खों की हार हो, और विजय हो उनके शत्रुओं की! उस रात को युद्ध का कोई फैसला नहीं हुआ। अतः प्रातः पुनः भीषण समर का आरंभ हुआ। इस बार सेनापति लालसिंह की सेना पर अंगरेजों ने बुरी तरह आक्रमण किया। अनेक सिक्ख काट डाले गए। ऐसे अवसर पर सेनापति तेजसिंह की एक पलटन पास ही खड़ी थी, पर उस नीच ने उसे अंगरेजों के मुकाबले में नहीं भेजा। वह अपने क्रूर नेत्रों से अपने सिक्ख भाइयों की हत्या का दृश्य देखता रहा। अंत में एक ताजी अंगरेजी फौज ने तेजसिंह की पलटन पर भी आक्रमण किया, और उस नीच को अपनी पलटन लड़ाने के लिए विवश किया।

'तेजसिंह के दल ने विचित्र योग्यता से अंगरेज का सामना किया और उनके पैर उखाड़ ही दिए। अंगरेजी पलटन दुम दबाकर भाग चली, पर हाय रे पंजाब कुकपाल! नीच तेजसिंह ने सब चौपट कर दिया। अंगरेजी फौज का पीछा करने की आज्ञा देना तो दूर वह पतित अपना घोड़ा पीछे की ओर मोड़कर स्वयं भाग चला। सेनापति को भागते देख सेना ने भी उसी का अनुकरण किया, और इस प्रकार अंगरेजों को तेजसिंह की बेईमानी की दया से मुक्त में ही विजय मिली।

'पर यह विजय पराजय से भी महँगी थी। इससे अंगरेजी सेना का सातवाँ भाग काम आया। अब - अब वही इच्छा होती है कि एक बार पुनः शत्रुओं के रक्त में स्नान करूँ, ओर अपने प्रियतम पंजाब को परतंत्र होने से बचाऊँ। यद्यपि मैं बहुत बूढ़ा हो गया हूँ, फिर भी स्वदेशोद्धार के लिए कुछ उठा रखने की मेरी इच्छा नहीं होती। तुम्हारी क्या सहमति है? तुम पति चाहती हो या पंजाब? उत्तर शीघ्र देना।

तुम्हारा -

श्यामसिंह।'

पत्र समाप्त होने पर एक ठंडी साँस लेकर चंदादेवी ने दासी से पत्र का उत्तर लिखने को कहा। उत्तर इस प्रकार लिखा गया -

'प्रियतम!

'पत्र मिला। समाचार पढ़कर हृदय दुख से भर गया। हाय! महाराणा रणजीतसिंह के मरते ही उनके प्रियतम पंजाब की यह अधोगति! खैर, आप अपना कर्तव्य न भूलिएगा। मैं पति चाहती हूँ, परंतु अकर्मण्य पति नहीं। इसके लिए चाहे लोग मुझे कुछ भी क्यों न कहें।

'आप इसका सर्वदा ध्यान रखिएगा कि आप महाराणा रणजीतसिंह के लड़कपन के साथी और उनके पौत्र के श्वसुर हैं। आप इसका सर्वदा ध्यान रखिएगा कि पंजाब-प्रदेश गुरु गोविंदसिंह की पवित्र थाती है। उसे शत्रुओं के हाथ में देना और गुरु का अपमान करना एक ही बात है।

'प्राणधन! आप देश-द्रोहियों के कुचक्र में पड़कर अपना अंत कदापि भ्रष्ट न करिएगा।

आपकी दासी

चंदा।'

'भाई करुणसिंह!' अपनी सफेद दाढ़ी पर हाथ फेरते-फेरते सजल नेत्रों से अटारी के सरदार श्यामसिंह बोले - हमारा प्यारा पंजाब सदा के लिए हमारे हाथों से जा रहा है! एक तरफ से बाहरी राक्षस उसके मांस के लिए छटपटा रहे हैं, और दूसरी ओर से भीतरी। भाई साहब! हमने निश्चय कर लिया है कि हम अपने सामने अपने स्वदेश को विदेशियों में पद-दलित होते न देखेंगे। बड़ी प्रबल इच्छा है कि एक बार पुनः अंगरेजों को दिखा दूँ कि भारतवर्ष के क्षत्रिय कैसे होते हैं।'

'पर सरदारजी, हम लोग अकेले क्या कर सकते हैं? बड़े-बड़े अधिकारी विदेशियों के चरणों की ओर देख रहे हैं। एक ओर लालसिंह कुत्तों की तरह खड़ा, पंजाब का एक टुकड़ा गोश्त ब्रिटिश-सिंह से माँग रहा है, दूसरी ओर नीच तेजसिंह श्रृंगाल की तरह जन्म-भूमि की हड्डी का एक टुकड़ा चाहता है। अब शत्रुओं का एक नया सहायक जंबू का राजा गुलाबसिंह भी पंजाब की छाती पर मूँग दलने आ गया है। सिक्खों ने इस दुष्ट को व्यर्थ में ही ऐसे कठिन अवसर पर अपना मंत्री चुना। आपने गुलाबसिंह की नीचता सुनी?'

श्यामसिंह - 'नहीं तो। क्या किया उसने?'

करुणसिंह - 'सुना है, उसमें और लॉर्ड हार्डिंज में एक गुप्त-संधि हुई है, जिस पर सब सेना-नायकों के भी हस्ताक्षर हैं। उस संधि का यही आशय है कि अंगरेज जब-जब सिक्ख सेना पर आक्रमण करें, तब-तब सिक्खों के सेनापति फौजों से अलग हो जाएँ,

और इस प्रकार पराजित वीरों को लाहौर-दरबार सेना से बाहर निकाल दे, जिससे अंगरेजों को सतलज पार करने और राजधानी में प्रवेश करने में कोई बाधा न रह जाय।'

'ऐसी संधि? ऐसी संधि गुलाबसिंह ने की है? आह! तुमने अब तक क्यों नहीं बताया? क्या कोई ऐसा सिक्ख नहीं, जो इन कुत्तों को यमालय भेज दे? पर जाने दो, ये नाम-मात्र के पुरुष हैं, वस्तुतः इनमें स्त्रियों के इतना भी बल नहीं। इनकी हत्या से वीर-धर्म कलंकित होगा। करुणसिंह! हमने सुना था, अंगरेज बड़े नीतिज्ञ और वीर होते हैं। क्या यही नीति है? यह वीरता है? क्या इसे भी इतिहास युद्ध कहेगा? हाय! हाय! भाई करुण! हमारी मातृ-भूमि, हमारा पंचनद, हमारा स्वर्ग, हमारा नंदनवन नष्ट हो जाएगा। और, हमारे ही हाथों से! करुण, जरा मेरी तलवार तो लाना। हमारे सब साथियों को बुला लाओ।'

श्यामसिंह रोने लगे। क्षण-भर में श्यामसिंह के अन्य साथी एकत्र हो गए। अपनी कृपाण हाथ में लेकर वृद्ध श्यामसिंह ने भीम गर्जना - 'वीरो! अब जीकर क्या करोगे? कुछ ही दिनों में विदेशी तुम्हें और तुम्हारे देश को जूतों से ठुकराएँगे - अब क्या करोगे जीकर? खालसा के वीरो! चलो, हम लोग स्वदेश के नाम पर रण-स्थल में प्राण विर्सजन करें। अपने हृदय के रक्त से गुरु गोविंदसिंह की मृत आत्मा को संतोष दें। यह देखो, यह हमारा पवित्र 'ग्रंथ' है। इसे छूकर प्रतिज्ञा करो कि प्राण रहते युद्ध-स्थल से मुँह न मोड़ेंगे।'

देशी द्रोही लालसिंह ने सोबराँव के युद्धारंभ के पूर्व ही सेना और पड़ाव का सब हाल अंगरेज सेनापति के पास लिखकर भेज दिया था। उसने एक पत्र में लिखा था -

'इस युद्ध के सेनापति तेजसिंह बने हैं, पर इसमें कुछ हानि नहीं। वह भरसक अंगरेजों को लाभ पहुँचाएँगे। मैंने घुड़सवार-सेना का भार लेकर उसे इधर-उधर - तितर-बितर कर दिया है। इसके अलावा सिक्ख-छावनी का दक्षिण भाग बहुत ही दुर्बल है, और उधर की दीवार भी बहुत कमजोर बनाई गई है।'

इतने समाचार ही से काम नहीं चला। सेनापतियों ने युद्ध में सैनिकों को गोला-बारूद भी न देने का निश्चय कर लिया।

वह - वह सोबराँव का प्रसिद्ध एक भीषण युद्ध हो रहा है। सेना-नायकों की उपेक्षा होने पर भी सिक्ख जी-जान से लड़ रहे हैं! इस वक्त उनका नायक कौन है? वह

देखिए, दुर्बल, वृद्ध, धवल श्मश्रु-आच्छादित बदनवाला वह वीर कौन है? उसका वस्त्र भी श्वेत है, घोड़ा भी श्वेत है, बाल भी श्वेत हैं, और श्वेत है हृदय भी।

जब उसने देखा कि सैनिकों को गोले और बारूद नहीं मिल रही है, तब वह तलवार की लड़ाई पर उद्यत हुआ। उसने अंगरेजों की 50वीं रेजीमेंट पर आक्रमण करने के लिए हवा में तलवार घुमाते हुए घोड़े को ऐंड़ लगाई। उसके साथी भी आगे बढ़े, पर साथी पचास से अधिक न थे। एक ओर सेना-की-सेना ओर एक ओर मुट्ठी-भर पचास आदमी। इसे कोई युद्ध कहेगा? श्यामसिंह के सब साथी अंगरेजों की मार से व्यग्र होकर सतलज की गोद में चले गए। पर वह बूढ़ा सरदार नहीं गया, और नहीं गया। देखते-देखते उस जर्जर शरीर में सात गोलियों ने अपने लिए घर बना लिया। वह स्वदेश के गौरव पर मर मिटा - मर मिटा!

'चंदन लाओ, रोली लाओ, आरती लाओ। हमारे जीवन-धन आ रहे हैं! अरी, मेरी श्रृंगार की पिटारी न भूलना, मैं श्रृंगार करके उनके दर्शन करूँगी। वह बहुत क्लांत हैं। उन्होंने वृद्ध होते हुए भी शत्रुओं को नाकों चने चबवाए हैं। मैं उनसे श्रृंगार करके मिलूँगी।

'देख, दूसरा कोई जोड़ा न लाना। वही लाना, जिसे मैंने अपने विवाह के दिन पहना था। नहीं तो जीवन-धन असंतुष्ट हो जाएँगे। आज भी तो मंगल-दिवस है। वह वीर-देश से शत्रुओं का संहार कर आ रहे हैं।

'नाथ! नाथ!! सुना है, युद्ध के समय तुम बहुत सुंदर जान पड़ते थे। तुमने विदेशियों के दाँत खट्टे कर दिए थे। आह! तुम सच्चे क्षत्रिय हो। आओ, तुम्हें इस बात का प्रमाण दूँ कि मैं भी अयोग्य नहीं। मुझे तुम्हारी दासी होने का पूर्ण अधिकार है - मैं सच्ची क्षत्राणी हूँ।

'सात गोलियाँ! इस अवस्था में सात गोलियों से तुम स्वर्ग-गामी हुए! मेरे सर्वस्व! तुमने मेरा जीवन सार्थक कर दिया!

'आज मारे गौरव के मेरी छाती फटी जाती है - मारे अभिमान के मेरा मस्तक आकाश से ऊँचा हुआ जा रहा है। तुम - मेरे प्राणनाथ - सच्चे क्षत्रिय हो!'

सिक्खों के प्रयत्न से सरदार श्यामसिंह का शव उनकी रियासत - अटारी - पहुँचाया गया, और उनकी वीर पत्नी अपने पति के साथ सती हो गई!

अटारी की शहरपनाह के बाहर अभी तक उस सती का स्मारक-स्वरूप एक स्तंभ खड़ा होकर पंजाब-निवासियों को उनके पूर्वजों की याद दिलाया करता है।